# बाल साहित्य : आसमां कैसे–कैसे

❑ डॉ. रामबक्ष

बाल साहित्य के बारे में हम जब भी बात करते हैं, तब बड़ों की बड़ी दुनिया में एक 'छोटा' साहित्य लेखन मानकर करते हैं। बच्चों की हरकतें, क्रियाकलाप, उनका रोना-गाना-हंसना सब 'बचपना' है, सही है, परन्तु इन सबका सर्जन करना कितना मुश्किल है, यह तथाकथित 'बाल साहित्य' को देखकर आसानी से कहा जा सकता है। बाल साहित्य की संभावना एवं वर्तमान साहित्य के बीच गहरी खाई का अहसास बच्चों को भी है।

आमतौर से बाल साहित्य को चार कोटियों में बांटा जाता रहा है -

1. वह साहित्य जिसका सर्जन बड़े करते हैं, जिनका पठन-पाठन 'बड़े' बुजुर्ग करते हैं, परन्तु जिनके पात्र बच्चे होते हैं। बच्चों के बारे में बड़ों द्वारा लिखा गया साहित्य इस कोटि में रखा जा सकता है। ऐसे साहित्य को बच्चे भी पढ़ सकते हैं। कई बार पढ़ते भी हैं, आत्म-साक्षात्कार भी करते हैं। परन्तु यह उनको संबोधित नहीं होता। ऐसे लेखक को बाल मनोविज्ञान की बारीक समझ तो होनी ही चाहिए, साथ ही बच्चों से प्यार भी करना आना चाहिए। हिन्दी में सूरदास ने इस कोटि के अद्‌भुत बाल साहित्य की रचना की है। आधुनिक काल में, आधुनिक दृष्टि से ऐसा लेखन निर्मल वर्मा ने किया है। 'एक चिथड़ा सुख' का बिट्टी का कजिन इस कोटि का अनोखा पात्र है, जो बड़ों की दुनिया में होते हुए भी नहीं होता। अपनी उपस्थिति से अनुपस्थित यह हिन्दी उपन्यास का मौलिक पात्र है।

2. दूसरी कोटि उस साहित्य की बन सकती है, जिसके पाठक बच्चे होते हैं। यह बच्चों को संबोधित साहित्य है। इसमें बड़े चाहते हैं कि बच्चे ऐसा साहित्य पढ़ें। इसमें यह मानकर चला जाता है कि बच्चे नासमझ होते हैं। उन्हें समझाना, शिक्षित करना और प्रशिक्षण देना हमारा काम है। वे हमारे मार्ग निर्देशन में बड़े होने चाहिए। हिन्दी में पाठ्यपुस्तकधर्मी विपुल बाल साहित्य इस श्रेणी में आता है। पंचतंत्र और हितोपदेश जैसी क्लासिक कृतियों को भी इस श्रेणी में रखा जा सकता है। यह चुनौती भरा लेखन होता है, वैसे ही जैसे किसी बच्चे का लालन-पालन चुनौती भरा होता है।

3. ऐसा साहित्य भी बाल साहित्य की श्रेणी में आता है जिसे बच्चे पढ़ना चाहते हैं, लेकिन 'बड़े' नहीं चाहते कि बच्चे इसे पढ़ें। कार्टून, चित्रकथाएं, विचित्र परीकथाएं आदि इस श्रेणी में आते हैं। इनको पढ़ने के लिए बच्चे झूठ बोलते हैं, बहाने गढ़ते हैं, कभी-कभी मार भी खाते हैं। पढ़ने के प्रति आरंभिक आकर्षण इनसे पैदा होता है।

4. ऐसा साहित्य जिसके लेखक बच्चे होते हैं, वही पढ़ते भी हैं। उन्हें चाहें तो 'बड़े' सुधार सकते हैं, परिष्कार कर सकते हैं। हालांकि ऐसे 'बड़े' बहुत कम होते हैं, जो बच्चों की रचनाओं को, उनकी सर्जना को सुधार सकें। उन्हें दिशा दे सकें। यह उस पूरे समाज का दायित्व है, जिसमें बच्चे रहते हैं, उनके माता-पिता, शिक्षक, बड़े भाई-बहिन, सहपाठी आदि ऐसी भूमिका निभाते रहते हैं। इसके किसी शास्त्र का निर्माण अभी तक नहीं हुआ है। उम्र के

साथ, बच्चों की अपनी आलोचनात्मक शक्ति के विकास के साथ-साथ उनकी सर्जन शक्ति स्वत: दिशा ग्रहण करती जाती है। ऐसा होते-होते एक दिन बच्चा बड़ों की दुनिया में प्रवेश पाता है।

यह अवश्य है कि बच्चों की रुचि बच्चों में नहीं होती । वे बच्चों को नहीं, बड़ों को जानना-समझना चाहते हैं। अपने से जरा-सा बड़ा कोई हो, जो जीवन की अगली कक्षा का विद्यार्थी हो, जो उससे आगे वाली शैतानी कर सके - वह उसका नायक होता है। उसके माध्यम से बड़ों की दुनिया देखना चाहता है। इसलिए जो लोग बाल साहित्य को बच्चों के बारे में साहित्य समझते हैं, वे अधूरे सत्य को देखते हैं। बच्चे बड़ों को उनसे बेहतर समझते हैं।

इस संदर्भ में यहां यह कह देना प्रासंगिक होगा कि बच्चे बेवकूफ नहीं होते । जो बच्चों को बेवकूफ समझते हैं, वे बाल-साहित्य की रचना नहीं कर सकते। इसलिए यदि कोई व्यक्ति बच्चों के सामने मूर्खतापूर्ण बातें करता है, तो वे उसको तर्कातीत भाषा में तुरंत खारिज कर देंगे। वे आपके दिल की भाषा गहराई से समझते हैं। उनको पता है कि वे किसकी गोद में सुरक्षित हैं तथा कौन से हाथ अनाड़ी हैं, इसलिए तुरंत रोने लगते हैं। इसलिए बाल साहित्य में यथार्थ की विकसित समझ अभिव्यक्त होनी चाहिए।

यहां यथार्थ की जानकारी ही पर्याप्त नहीं है। उस जानकारी को 'खेल' में बदलने वाली कला भी होनी चाहिए। जाहिर है कि यथार्थ खेल तब बनेगा जब वह पूरी तरह से आपके नियंत्रण में हो। गेंद पर यदि आपका नियंत्रण नहीं है, तो आप उसे ठीक दिशा में नहीं फेंक पाएंगे। आपकी लय नहीं बन पाएगी। यथार्थ की अभिव्यक्ति बाल साहित्य को नीरस पाठ में बदल देगी। जिससे प्रो. कृष्ण कुमार जॉयफुल रीडिंग कहते हैं - पढ़ने का आनंद और आनंद से पढ़ना यथार्थ को सर्जन में रूपांतरित करने से संभव हो पाता है। सात-आठ वर्ष का बच्चा भी जानता है कि सूर्योदय पूर्व में होता है। पृथ्वी इस सूर्य के चारों ओर चक्कर काटती है। अब बच्चा इस जानकारी से खुश नहीं होता। वह चाहता है कि कोई ऐसा पात्र आवे, जो पृथ्वी को जरा-सा खिसका दे, सूर्य को दक्षिण में उगा दे। तब इस वायुमण्डल का क्या होगा ? इसकी कल्पना करें। यह बताते हुए करें कि ऐसा संभव नहीं होगा। तब इस फैण्टेसी के कलात्मक आनंद की सृष्टि होगी, जो बाल साहित्य की आत्मा है। बच्चे जानकारी से आनंदित नहीं होते, सर्जन से आनंदित होते हैं। वे चीजों को वहां से हटाना चाहते हैं, जहां पर वे सदियों से स्थापित हैं। वे इस पृथ्वी को रूपान्तरित करना चाहते हैं। चन्द्रमा से खेलना चाहते हैं। सूर्य को जेब में रखना चाहते हैं। यह कल्पना असंभव भले ही लगे, लगते हुए भी, उसे आनंद

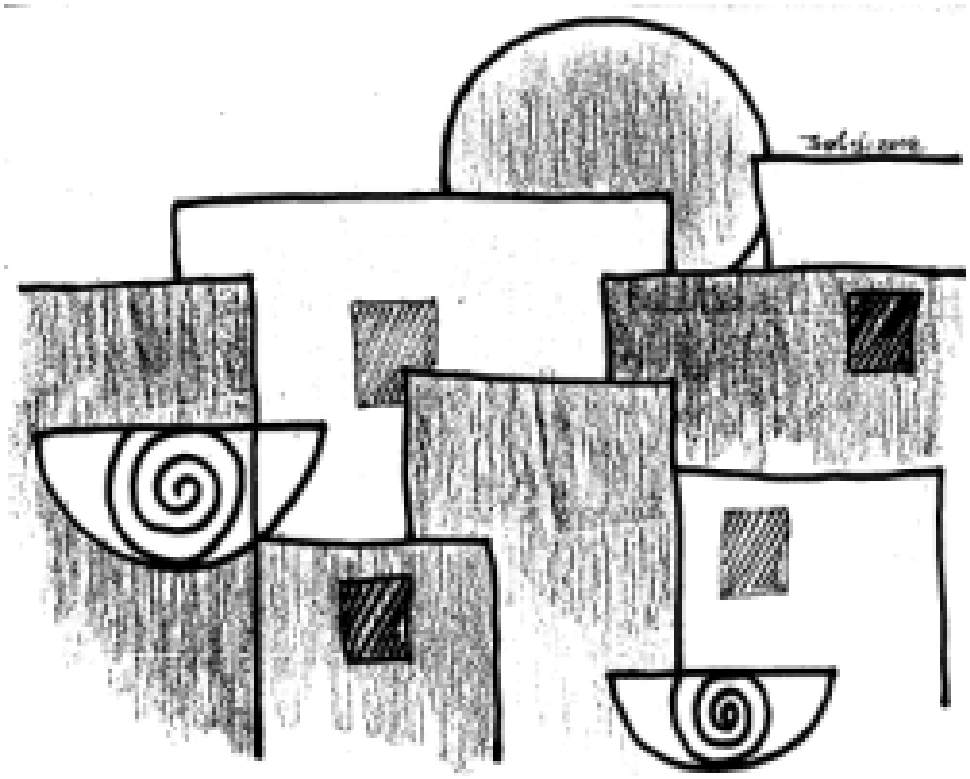

देती है। जो सच है, उसे बताते हुए असंभव फैण्टेसी बन जाए, तभी वह बाल साहित्य है, अन्यथा नीरस पाठ का एक हिस्सा है।

बाल साहित्य में अपने समय के सबसे विकसित ज्ञान का सार व्यक्त होता है। होना चाहिए। अन्यथा लेखक पाठकों की नजरों में गिर जाएगा। बच्चों की अबोधता और मासूमियत की रक्षा करते हुए, उनकी सर्जनात्मकता के लिए स्थान उपलब्ध करवाते हुए यह किया जाना चाहिए। श्रेष्ठ बाल साहित्य जाने-अनजाने यह करता है। ◆